शिक्षा एवं सामाजिक परिवर्तन

□ श्री भवानीशंकर गर्ग
(आचार्य, जनता कालेज, डबोक, एवं कुलप्रमुख, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर)

सृष्टि की रचना के साथ ही समाज के क्रमिक विकास में मानव का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। व्यक्ति के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती और न ही समाज के बिना व्यक्ति का विकास ही संभव है। आदि-मानव से लेकर आज तक के आधुनिक समाज का विकास विभिन्न क्षेत्रों, प्रान्तों एवं राष्ट्रों में विभिन्न कारणों, भौगोलिक तथा अन्य देशकाल और परिस्थितियों के कारण अलग-अलग संस्कृतियों एवं सभ्यताओं के विकास के रूप में हुआ है। संस्कृति यदि समाज की आत्मा है तो सभ्यता उसका व्यावहारिक आचरण है। मानव की जिज्ञासा, निरन्तर सीखने की प्रवृत्ति तथा अनवरत प्रयोगों के कारण आज विश्व विज्ञान, कला, साहित्य, सामाजिक जीवन, तकनीकी ज्ञान तथा रहने-सहने के उच्चतम शिखर पर पहुँच गया है तथा और आगे बढ़ने के अनवरत प्रयत्न चल रहे हैं। इन निरन्तर होने वाले परिवर्तनों के कारण आज का मानव आदिमानव से बिल्कुल भिन्न है। परिवर्तन के इस क्रम में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

विश्व की अनेक संस्कृतियों एवं सभ्यताओं में भारतीय संस्कृति प्राचीनतम मानी गई है। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ खान-पान, रहन-सहन, बोल-चाल, रीति-रिवाज आदि क्षेत्रीयता के आधार पर बिल्कुल भिन्न है, वहाँ देश की भावात्मक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता आज भी अक्षुण्ण है। इसका मुख्य कारण यहाँ की प्राचीनतम सांस्कृतिक धरोहर, शिक्षण का आध्यात्मिक आधार तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में लचीलापन है।

सामाजिक परिवर्तन के इस क्रम में शिक्षा का बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। आधुनिक युग में सामाजिक परिवर्तन एवं शिक्षा के परस्पर सम्बन्ध की बहुत चर्चा होती रहती है। भारत जैसे विकासशील देश में तो यह चर्चा और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक परिवर्तन की प्रवृत्ति एवं विशेषताओं की जानकारी किये बिना शिक्षा एवं सामाजिक परिवर्तन की जो चर्चा की जाती है वह प्रायः अत्यन्त अस्पष्ट व छिछली ही रहती है। अतः इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम सामाजिक परिवर्तन की समाजशास्त्रीय व्याख्या करना आवश्यक है। इसके बाद ही उसका एवं शिक्षा का पारस्परिक सम्बन्ध-विश्लेषण किया जा सकता है।

सामाजिक परिवर्तन

समाजशास्त्री किंगस्ले डेविन के अनुसार सामाजिक परिवर्तन से केवल वे ही परिवर्तन समझे जाते हैं जो कि सामाजिक संघटन अर्थात् समाज के ढांचे एवं कार्य में घटित होते हैं।

अन्य समाजशास्त्रियों की परिभाषाओं का सार यह है कि सामाजिक परिवर्तन वह स्थिति है जिसमें समाज द्वारा स्वीकृत सम्बन्धों, प्रक्रियाओं, प्रतिमानों और संस्थाओं का रूप इस प्रकार से परिवर्तित हो जाता है कि उससे पुनः अनुकूलन करने की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

प्रत्येक समाजिक परिवर्तन में तीन तत्त्व अवश्य ही होते हैं—वस्तु, भिन्नता तथा समय। यह स्मरणीय है कि सामाजिक परिवर्तन वास्तव में सांस्कृतिक परिवर्तन का एक भाग ही होता है। क्योंकि सांस्कृतिक परिवर्तन में संस्कृति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के किसी भी पक्ष या अंग में यथा—कला, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, दर्शन आदि में परिवर्तन व सामाजिक संगठन के स्वरूपों और नियमों में होने वाले परिवर्तन सम्मिलित होते हैं।

सामाजिक परिवर्तन की महत्त्वपूर्ण विशेषतायें

नील जे० स्मेलसर के अनुसार सामाजिक परिवर्तन की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ निम्न हैं—

१. आधुनिक समाजों में परिवर्तन की गति बहुत तीव्र होती है।
२. परिवर्तन एक क्रम है। वे अचानक घटित होने वाली घटनायें नहीं हैं।
३. आधुनिक परिवर्तन से उत्पन्न होने वाले प्रभाव विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।
४. प्रायः आधुनिक परिवर्तन नियोजित परिवर्तन होते हैं। लेकिन यह हो सकता है कि एक नियोजित परिवर्तन से कई और परिवर्तन समाज में आ जाएँ जिनकी पहले आशा भी नहीं की गयी हो।
५. सामाजिक विकास और नई तकनीकी प्रयोग के बढ़ने के साथ ही समाज में उसी अनुपात से और अधिक सामाजिक परिवर्तन होने लगते हैं।
६. सामाजिक परिवर्तन से न केवल व्यक्तिगत रूप से व्यक्ति प्रभावित होते हैं, अपितु सम्पूर्ण सामाजिक संरचना तथा व्यवस्था की कार्य पद्धति में परिवर्तन आ जाता है।

सामाजिक परिवर्तन की प्रवृत्ति

१. सामाजिक परिवर्तन की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। कोई नहीं कह सकता कि समाज में कौन-कौन से परिवर्तन होंगे और कब-कब ?
२. सामाजिक परिवर्तन जटिल होते हैं।
३. सामाजिक परिवर्तन अनिवार्य रूप से होने वाली घटना है।
४. सामाजिक परिवर्तन सार्वभौमिक हैं।
५. सामाजिक परिवर्तन की गति तुलनात्मक है।

सामाजिक परिवर्तन के कई कारण

भौगौलिक, जैविकीय, जनसंख्यात्मक, प्रौद्योगिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, युद्ध और क्रान्ति आदि हैं। सामाजिक परिवर्तन के पाँच रूप—प्रक्रिया, विकास, प्रगति, सुधार तथा क्रान्ति हो सकते हैं।

सामाजिक परिवर्तन का विरोध

सुधारकों का यह अनुभव रहा है कि परिवर्तन लाने के लिए साधन, कार्यकर्ता जुटाने व कार्य करने से ही उन्हें सफलता नहीं मिलती; अपितु उन्हें कई कोनों से विरोध का सामना करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, सरकारी कर्मचारी, न्यायालय, धार्मिक संस्थाएँ, प्रेस, समुदाय के नेता उनका विरोध कर सकते हैं और वे परिवर्तन के सामाजिक नियन्त्रणों के रूप में कार्य कर सकते हैं। वे परिवर्तन की प्रवृत्ति व दिशा को भी मोड़ सकते हैं। वे उसके प्रभाव की गति व मात्रा को भी बदल सकते हैं।

सामाजिक परिवर्तन और शिक्षा

सामाजिक परिवर्तन और शिक्षा के परस्पर सम्बन्धों को हम निम्न रूपों में विश्लेषित कर सकते हैं—

(क) किसी देश में सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए अनिवार्य शर्त या आवश्यकता के रूप में शिक्षा।
(ख) किसी देश में सामाजिक परिवर्तन लाने के साधन या अभिकर्ता के रूप में शिक्षा।
(ग) एक देश में सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव के रूप में शिक्षा।
(घ) सामाजिक परिवर्तन के लिए आवश्यक शर्त के रूप में शिक्षा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षा के समुचित आधार या प्रयास के बिना समाज में सामाजिक परिवर्तन लाना कठिन हो जाता है। कई विकासोन्मुख देशों में यह देखने में आया है कि वहाँ लगाये गये कीमती व उच्चस्तरीय यन्त्र, कल-कारखाने और अन्य उत्पादन केन्द्र वहाँ प्रायः अपना लाभ पूरा नहीं दे सकते हैं। क्योंकि उनके लिए उपलब्ध होने वाले कार्यकर्ताओं और श्रमिकों में या तो अशिक्षा ही व्यक्त होती है अथवा अल्प-शिक्षा। हम यह भी देख सकते हैं कि सामाजिक सुधार के कार्यक्रम भी तभी सफल हो सकते हैं जब जनता में शिक्षा का कोई न कोई स्तर कायम हो। भारत में ऐसे कई समाज सुधार के कानून बनाये तो गये परन्तु उन्हें वास्तविक रूप में शिक्षा के अभाव के कारण लागू नहीं किया जा सका या समाज ने उन्हें स्वीकार नहीं किया, जैसे—शारदा एक्ट, छूआछूत सम्बन्धी कानून आदि। अधिकतर भारतीय ग्रामीण जनता अशिक्षित है और वह इन प्रयासों के महत्त्व को नहीं समझ सकी है। इसी प्रकार स्वच्छ जीवन, उत्तम स्वास्थ्य, तर्कपूर्ण चिन्तन आदि के विकास में शिक्षा का अभाव अत्यन्त बाधक रहा है। भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षित पंचों, सरपंचों ने अपनी अशिक्षा के फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को बहुत अधिक सीमा तक बाधा पहुँचाई है। भारतीय समाज में अभी तक अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था न हो पाने के कारण वांछित सामाजिक परिवर्तन नहीं हो पा रहा है।

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन के अभिकर्ता के रूप में

सामाजिक परिवर्तन का इच्छुक समाज कई प्रकार के कारकों, संस्थाओं, संयन्त्रों अथवा अभिकर्ताओं को काम में लाता है। उनमें से एक महत्त्वपूर्ण संयन्त्र शिक्षा-व्यवस्था होती है। यह विश्वास किया जाता है कि शिक्षा के द्वारा योग्य एवं विशेषीकृत कार्यकर्ता तैयार किये जा सकेंगे जो उच्च स्तरीय शिक्षा संस्थानों, औद्योगिक एवं व्यावसायिक प्रतिष्ठानों तथा अधिकारी तन्त्र में कार्य कर सकेंगे। लोगों में नये सामाजिक मूल्य विकसित किये जा सकेंगे तथा उनको परम्परागत मूल्यों की जकड़न से छुटकारा दिलवाना सम्भव होगा, लोगों के व्यक्तित्वों में परानुभूति, गतिशीलता, प्रबुद्धता तथा अध्यवसाय की आधुनिक विशेषतायें उत्पन्न की जा सकेंगी तथा पिछड़ेपन, संकुचितता तथा अज्ञान को नष्ट किया जा सकेगा। शिक्षा के द्वारा लोगों के सामान्य ज्ञान, जीवन स्तर, स्वच्छता, स्वास्थ्य, नैतिकता तथा नव परिवर्तन के प्रति प्रेरणा तथा जागरूकता के स्तरों को विकसित किया जा सकेगा तथा सामाजिक विभेदीकरण या स्तरण तथा शोषण को कम किया जा सकेगा। उपर्युक्त विचार के पक्ष और विपक्ष में कई बातें कही जा सकती हैं। यद्यपि शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण साधन बन सकती है तथापि भारतीय परिस्थितियों में अनेक जटिल कारणों के फलस्वरूप ऐसा साधन बनने में पूर्ण सफल नहीं हो पा रही है।

सामाजिक परिवर्तन के परिणाम के रूप में शिक्षा

सामाजिक परिवर्तन और शिक्षा के परस्पर सम्बन्ध को विश्लेषित करने का तीसरा उपक्रम यह हो सकता है कि शिक्षा को गठित हो चुके सामाजिक परिवर्तन के रूप में देखने का प्रयास किया जाय। भारतीय समाज में यह देखने में आता है कि गाँवों में डाकखाने, बैंक, सहकारी बैंक, दुकानें तथा शहरों में बैंक, सुपरमार्केट, आयकर विभाग आदि अनेकानेक औपचारिक व जटिल कार्यालय खुल गये हैं। जिनसे अपना काम निकलवाने हेतु कई प्रपत्रों को भरना होता है, कई नियमों का पालन करना पड़ता है तथा कई अन्य औपचारिकताएँ पूरी करनी होती हैं। अशिक्षितों को इसमें कई असुविधाएँ होती हैं। अतः उनमें यह भावना उत्पन्न होने लगी है कि बच्चों को अवश्य पढ़ाना चाहिए, हम चाहे न पढ़ सके हों। शहरों का जीवन देखकर, आधुनिक जीवन की लालसा तथा नौकरियाँ आदि प्राप्त करने के लिये भी पढ़ने के प्रति प्रवृत्ति बढ़ने लगी है। यही कारण है कि ग्रामीण समुदाय की सभी जातियों के निरक्षर लोग अपने बच्चों को पढ़ने भेजने लगे हैं।

पाठशाला की भूमिका

स्कूल का कार्यक्षेत्र आज के सन्दर्भ में बहुत विस्तृत है। संस्थाओं का प्रभाव समाज पर पड़ता है तथा समाज भी इन्हें निरन्तर प्रभावित करता रहता है। इस तरह स्कूल एवं समाज एक दूसरे के पूरक हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आधुनिक समाज में निरन्तर होने वाले क्रान्तिकारी परिवर्तनों के कारण सामाजिक मूल्यों एवं धारणाओं में भी भारी परिवर्तन हो रहे हैं। व्यक्ति इन परिवर्तनों के कारण यथास्थिति में नहीं रह सकता। शिक्षण संस्थाओं के प्रचार तथा प्रसार ने इस दिशा में काफी कार्य किया है। लेकिन सभी स्थानों एवं समाजों में शिक्षण संस्थाएँ एक तरह का प्रभाव नही डालतीं। देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुकूल समाज में अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। इस प्रभाव में सारे समाज के लिये कोई एकरूपता नहीं है।

संस्कृति का पोषण

समाज के सन्दर्भ में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य संस्कृति का पोषण है। प्रत्येक समाज की रचना, संगठन एवं विकास की अपनी विशेष संस्कृति और सभ्यता है। प्रत्येक व्यक्ति, जो उस समाज का मुख्य बिन्दु है, उस संस्कृति से पोषित एवं क्रमिक रूप से विकसित होता है। लेकिन उस व्यक्ति के जीवन में आधुनिक क्रान्तिकारी परिवर्तन के सन्दर्भ में जो भी विकास का क्रम बनता है, उसमें शिक्षण संस्थाओं का बहुत बड़ा योग रहता है। व्यक्ति को सीखने की क्षमता, शिक्षण की व्यवस्था, दूसरों तक ज्ञान पहुँचाने का क्रम तथा अर्जित ज्ञान का स्वयं के जीवन में उपयोग एवं उसके अनुकूल आचरण आदि सांस्कृतिक आधार हैं जो प्रत्येक समाज में अपनी विशेषताओं के साथ अवस्थित हैं। हर क्षेत्र के लिए संचित समाज के प्रत्येक व्यक्ति तक ज्ञान पहुँचाने का कार्य शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।

संस्कृति प्रत्येक क्षेत्र का संचित ज्ञान ही नहीं वरन् वह सामाजिक मूल्यों, विश्वासों और मान्यताओं का भी आधार है जो सदियों से उसे विरासत में मिला है। इन विशेषताओं को लेकर व्यक्ति का शिक्षा कार्य शिक्षण संस्थाओं द्वारा होता है।

स्कूल का विस्तृत कार्यक्षेत्र

अतः आधुनिक युग में शिक्षण संस्थाओं का कार्य बहुत ही विस्तृत हो गया है। वे केवल ज्ञान के नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन के प्रतीक सांस्कृतिक केन्द्र बन गयी हैं। उनका कार्यक्षेत्र केवल पाठ देने तक सीमित न रहकर समुदाय के माध्यम से सारा समाज है।

व्यक्ति एवं स्कूल

व्यक्ति का सम्बन्ध चूँकि मुख्यतया परिवार से है अतः परिवार आज भी उसके समाजीकरण की मुख्य धुरी है। परन्तु स्कूल उसे नये समाज के लिये तैयार करने में प्रभावशाली भूमिका निभाता है। वह उसे कार्य-क्षेत्र के लिये तैयार करता है। उसे नये सामाजिक मूल्य, तकनीकी ज्ञान आदि देता है। अतः उसका मुख्य सम्बन्ध सेवा का है।

साथ ही परिवार के बहुत से कर्तव्यों को स्कूलों द्वारा ले लिया गया है। बच्चा अब घर में कम और स्कूल में ज्यादा समय देता है। इस प्रकार सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में उसका महत्त्व बढ़ गया है। इसके कारण परिवार के सदस्यों को अन्य सामाजिक कार्यों में सम्मिलित होने का अवसर मिल जाता है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि परिवार के समर्थन से ही स्कूल की उपयोगिता रहती है। अतः उसकी सफलता परिवार पर अवलम्बित है।

राजनीति एवं स्कूल

भारतीय समाज की जटिलता, सांस्कृतिक विभिन्नता, सामाजिक मान्यताओं, प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था, समाजवादी समाज की रचना, धर्म निरपेक्षता के सन्दर्भ में स्कूल एवं राजनीति का सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण बन गया है।

उपर्युक्त सांस्कृतिक विभिन्नताओं के कारण समाज के परिवर्तन तथा देश के विकास के लिये प्रत्येक क्षेत्र में बुनियादी बातों पर कुछ आधारभूत एकता एवं कार्यक्रम होना आवश्यक है। इसके लिए राजनैतिक परिपक्वता अपेक्षित है। स्कूल इसके लिये अच्छा साधन है। स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बुनियादी बातों में एकरूपता लाने के लिये शिक्षा का बहुत महत्त्व है। भारत जैसे निरक्षरता-प्रधान देश में राजनैतिक परिपक्वता शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। अन्धविश्वास, सामाजिक बुराइयाँ, जातिवाद, छूआछूत आदि को दूर करने में भी शिक्षा महत्त्वपूर्ण योग देती है। ये प्रजातन्त्र के बड़े शत्रु हैं। नागरिक प्रशिक्षण आज के सन्दर्भ में अति आवश्यक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थशास्त्र एवं स्कूल

व्यक्ति की शिक्षा पर जो भी खर्च किया जाता है वह आर्थिक इनवेस्टमेन्ट है। शिक्षित होकर व्यक्ति न केवल अपनी आर्थिक स्थिति सुधारता है वरन् देश के आर्थिक विकास में भी बहुत बड़ा योगदान देता है। इंजीनियर, डॉक्टर, तकनीकी विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, साहित्यकार आदि इस विकास में सम्पूर्ण रूप से भागीदार हैं। अतः शिक्षा पर किया गया खर्च फिजूलखर्च न मानकर भविष्य के लिये उपयोगी माना जाना चाहिए। शिक्षण संस्थाओं में शिक्षित होकर ही विकास के हर क्षेत्र के कर्मचारी देश के आर्थिक विकास की धुरी की तरह कार्य करते हैं। इससे भी सामाजिक परिवर्तन में क्रान्तिकारी योगदान मिलता है।

धर्म एवं शिक्षा

प्राचीन काल में भारत में शिक्षा का आधार आध्यात्मिक ही था। आज भी इन संस्थाओं का समाज में पूर्ण प्रभाव है। भारत जैसे विभिन्नताओं वाले देश में धर्म निरपेक्षता समाज का आधारभूत बिन्दु है लेकिन विभिन्न आध्यात्मिक मान्यताओं का मौलिक चिन्तन, नैतिक विश्वास के लिये आवश्यक है। यही कारण है कि विभिन्न धार्मिक संस्थाएँ समाजीकरण के लिये आज भी महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। लेकिन उनका दृष्टिकोण साम्प्रदायिकता के प्रसार के लिये नहीं वरन् देश में साम्प्रदायिक एकता एवं धर्म निरपेक्षता में योगदान के लिये होना चाहिये। शिक्षण संस्थाएं इसके लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

समुदाय एवं स्कूल

जैसा कि पहले बताया जा चुका है समुदाय एवं शिक्षा का सम्बन्ध गहरा है। भारतीय समाज के सन्दर्भ में यह और भी महत्त्वपूर्ण है। स्थान विशेष की आवश्यकताओं, सामाजिक मान्यताओं, भौगोलिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति के आधार पर ही अभ्यासक्रम आदि निर्धारित करना आवश्यक है। अतः आज का स्कूल अपने आपको केवल स्कूल की चारदीवारी तक सीमित नहीं रख सकता। उसे समुदाय के विकास को ध्यान में रखकर कार्य करना होगा। यही कारण है स्कूल-कम-कम्युनिटी सेन्टर की कल्पना से शिक्षा में कार्य करने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ रही है। अनौपचारिक एवं औपचारिक शिक्षा का समन्वय इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। समुदाय के बौद्धिक विकास की कार्यवाही शिक्षा के साथ-साथ यदि नहीं की गई तो यह शिक्षा असफल हो जायेगी तथा समाज उसकी उपेक्षा करेगा। समुदाय को शिक्षण संस्थाओं के आर्थिक विकास में आवश्यक मदद देनी चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा सामाजिक परिवर्तन के लिये न केवल महत्त्वपूर्ण परन्तु आवश्यक आधार है। शिक्षा एवं सामाजिक परिवर्तन जब से सृष्टि की रचना हुई है तब से एक दूसरे के पूरक रहे हैं और आने वाली पीढ़ियों तक भी रहेंगे।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org